

UG SEMESTER 1 HISTORY NOTES

वसुधैव कुटुम्बकम् / Vasudhaiv Kutumbakam (अर्थ एवं अवधारणा)

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम् ।

उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥

यह अपना बंधु है और यह अपना बंधु नहीं है, इस तरह की गणना छोटे चित्त वाले लोग करते हैं। उदार हृदय वाले लोगों की तो (सम्पूर्ण) धरती ही परिवार है।

हिन्दुओं को महोपनिषद् का यह श्लोक बार-बार अंकित किया जाता है और कहा जाता है कि आपको सभी लोगों को स्वीकार करना चाहिए चूंकि ऐसा आपके धार्मिक ग्रंथों में लिखा है अतः इसमें आपको कोई आपत्ति कैसी?

यदि कोई हिंदू अंध-विश्वासी है और उसने इस श्लोक के अर्थ को न कभी समझा और न कभी समझने का प्रयास किया तो वह तो इसके शब्दशः अनुवाद को ही इस श्लोक का भाव मान लेगा और इसे स्वीकार कर लेगा। शब्दशः अनुवाद अथवा अर्थ किसी सिद्धांत का पूर्ण ज्ञान नहीं हो सकता। जैसे यदि कोई व्यक्ति विज्ञान के सिद्धांत **“प्रत्येक क्रिया की समान एवं विपरीत प्रतिक्रिया होती है”** के तात्पर्य को समझे बिना बस उन शब्दों को ही उस सिद्धांत का ज्ञान समझ लेगा तो वह उसे धक्का लगाने पर, धक्का देना ही उचित समझेगा। वह स्वयं को एक स्प्रिंग की भाँति समझेगा और ऐसे में कई बार लोगों में झगड़ा, विवाद आदि हो जाते हैं। अधूरी समझ होने से वह व्यक्ति नहीं जानता कि किसी क्रिया की प्रतिक्रिया के भिन्न रूप हो सकते हैं। यदि वह स्वयं को आघात अवशोषक (शॉक ऐब्जॉर्बर) के रूप में देखता तो उसकी प्रतिक्रिया भिन्न होती। किस परिस्थिति में कौन सा सिद्धांत कैसे उपयोग करना है यह सिद्धांतों की पूरी समझ होने पर ही संभव है।

अधूरे ज्ञान के कारण दुरुपयोग होने से दुष्परिणाम भी हो सकते हैं।

आज की प्रचलित भाषा में 'बंधु' शब्द भाई, मित्र, पति, पिता, प्रियजन या ऐसा कहें कि जिससे भी हम संबंध जोड़ना चाहें, एक बंधन चाहें, उसके लिए प्रयोग करते हैं।

परिवार की परिभाषा हिंदू संस्कृति अनुसार माता-पिता व संतान तक सीमित नहीं हैं अपितु इसे तो परिवार की न्यूनतम इकाई समझा गया है। जिसे आज हम संयुक्त परिवार (ज्वाइंट फैमेली) कहते हैं पहले यह परिवार की एक इकाई थी। परिवार रक्त-संबंध (खून का रिश्ता) तक केंद्रित नहीं था अपितु उसकी सीमाओं के बाहिर भी जैसे गुरुकुल के शिक्षक व सहपाठी, एक ही व्यवसाय के लोग, आदि को भी परिवार की भाषा में सम्मिलित करता था। हम आज भी किसान-परिवार, शिक्षक-परिवार आदि शब्द सुनते हैं। आज भी हिन्दुओं में एक ही गोत्र में विवाह नहीं होता चूँकि सामान गोत्र वालों को एक ही परिवार का माना जाता है।

हिंदू संस्कृति ने परिवार को बहुत महत्ता दी है। हिंदू मानते हैं कि परिवार ही एक ऐसी इकाई, ऐसी रचना, ऐसा संस्थान है जिसमें वे एक सुरक्षित वातावरण में रह कर अपने जीवन को दुखों से रहित कर सकते हैं (देखें: हम न भूलें -04) व अपने सभी दायित्व भी निभा सकते हैं।

चूँकि अपने जीवन को दुखों से रहित करना हिन्दुओं का मुख्य उद्देश्य है इसलिए हिन्दुओं ने उन सभी को, जो उनके दुःख दूर करने में उनकी सहायता कर सकते हैं व दुःख दूर करने हेतु अनिवार्य हैं, अपना 'बंधु' माना है। दुखों से निवारण के लिए ये बंधु सदा उपलब्ध हों इसलिए ये बंधु उसके साथ उसके परिवार के सदस्य की भाँति रहने चाहिएँ, ऐसा वे मानते हैं।

हिंदू ने अपना बंधु केवल मनुष्य को ही नहीं अपितु इस धरती के सभी जीव-जंतु, वनस्पति और प्रकृति को माना और अपने को इस कुटुंब का हिस्सा माना। हिंदू तो कहता है कि सभी जीव-जंतुओं में आत्मा का वास है। सभी की आत्मा एक समान है। यह जीव-जंतुओं में अंतर केवल कर्मों के फल के कारण मिली भिन्न-भिन्न योनियों के भिन्न-भिन्न शरीरों का है। प्रत्येक योनि में शरीर प्रकृति से ही

बना है। एक-दूजे के बिना यह जीवन, यह संसार संभव ही नहीं है। प्राचीन समय के लोगों ने पञ्चभूतों को माता व देव की संज्ञा दी (धरती-माता, जल-देव, अग्नि-देव, वायु-देव व आकाश-देव) और अपने परिवार का संरक्षक माना। अपने परिवार के इन संरक्षकों का आदर (उनकी सेवा अर्थात् उनका संरक्षण) उसने अपना कर्तव्य माना। मनुष्यों के अतिरिक्त अन्य जीव-जंतुओं व वनस्पति को भी हिन्दुओं ने अपना बंधु व देव माना है जैसे जटायु, हनुमान, नल-नील, नाग-देव, आदि। तुलसी, पीपल, नीम, बरगद आदि वनस्पति का उनके लिए बहुत महत्त्व है। मूषक (गणेश जी), हंस (ब्रह्मा जी), नाग (विष्णु जी), सिंह (माँ दुर्गा), मोर (माँ सरस्वती) व अन्य पशु-पक्षियों को हिंदू अपने इष्ट के सामान आदर देते हैं।

परिवार में संतुलन बना रहे यह परिवार के प्रत्येक सदस्य का दायित्व है। परिवार उन्नत हो, सभी सुखी रहें व सभी इस हेतु अपना योगदान दें इसके लिए प्रत्येक परिवार के कुछ नियम होते हैं जो उसके प्रत्येक सदस्य के लिए बाध्य होते हैं। परिवार में मैं सुखी रहूँ, यह मेरा अधिकार है पर साथ-साथ मैं अन्य सदस्यों के सुख में बाधा न बनूँ और अन्य सभी भी सुखी हो सकें इसलिए अपनी क्षमता द्वारा पूरा योगदान दूँ, यह मेरा दायित्व भी है। मेरे अधिकार से पहले मेरा दायित्व होना चाहिए अन्यथा परिवार का संतुलन बिगड़ जाएगा व परिवार कुछ समय बाद टूट जाएगा।

जब कभी भी परिवार बड़ा होता है जैसे विवाह पश्चात् दुल्हन का नए घर आना, संतान का जन्म होना, किसी संबंधी का परिवार में आना और फिर वहीं रहना या किसी पशु-पक्षी का ही परिवार में आना तो परिवार के सदस्यों का यह प्रयास रहता है कि नव-आगंतुक को कोई कष्ट न हो। उनकी नव-आगंतुक से अपेक्षा होती है कि वह इस परिवार को अपना परिवार समझे और इस परिवार के रंग में रंग जावे। नए सदस्य के आने से परिवार का संतुलन न बिगड़े, वह परिवार की उन्नति में अपना योगदान दे, उसके आने से परिवार का सुख और अधिक बढ़े। यदि नव-आगंतुक यह अपेक्षा रखता है कि परिवार में सभी उसको स्वीकार करें, उसकी आवश्यकताओं का, उसकी भावनाओं का सम्मान

करें, उसे अपनी मन-मर्जी करने का पूर्ण अधिकार हो और इसके लिए वह परिवार के लिए कुछ भी न करे क्योंकि परिवार तो पहले से ही संपन्न है तो वह परिवार कुछ समय बाद अपनी सम्पन्नता खो देगा और परिवार के ऐसे सदस्य के कारण अंततः नष्ट ही हो जाएगा (दीमक लग जाने के बाद भी वृक्ष कुछ समय तक फल देता रहता है पर ऐसा वृक्ष अधिक समय तक जीवित नहीं रह सकता)।

हम न भूलें कि

- वसुधैव कुटुम्बकम् उनका कुटुंब है जो एक दूजे के सुख की कामना करते हैं व उसके लिए सदा प्रयत्नशील रहते हैं, मनुष्य ही नहीं अपितु सभी प्राणियों के प्रति सामान भाव रखते हैं व प्रकृति को जीवन के लिए अनिवार्य मान उसका संरक्षण चाहते हैं।
- यह कुटुंब उदार हृदय वालों का है। हिंदू संकीर्ण नहीं है। हिंदू आज भी

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया,

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भागभवेत्।

“सभी सुखी होवें, सभी रोगमुक्त रहें, सभी को अपने हर ओर भद्र (शिष्टता, शुभ, मंगल) दिखे और कोई भी दुखी न हो।”

की कामना करता है।

- उदारता का दुरुपयोग न हो कि कहीं यह उदारता ही आपको हानि न पहुँचा दे
- यह कुटुंब तभी तक जीवित रह सकता है जब तक सभी इसका संतुलन बनाए रखें, इसके नियमों का पालन करें और अपनी क्षमता अनुसार अपना योगदान दें। केवल कामना करने से, प्रार्थना करने से सब संभव नहीं।

- उपनिषदों के उपरोक्त दोनों श्लोक उस समय के हैं जब हिंदू विचारधारा के अतिरिक्त अन्य विचारधाराएँ नहीं थीं। सहस्रों वर्ष पुरानी वह विचारधारा आज भी समय की कसौटी पर सही हैं।
- पश्चिम में जन्मे मत-मतान्तरों का विचार भिन्न हैं। उनके लिए परिवार की बहुत संकुचित परिभाषा है। उनके अनुसार यह प्रकृति व इस पृथ्वी के जीव-जंतु मनुष्य के भोग के लिए है व इनका शोषण हो सकता है।
- इन मत-मतान्तरों के '**भोग में सुख**' के विचार ने इस पृथ्वी व प्रकृति में ऐसा असंतुलन ला दिया है कि मानव-जाति के दुःख कम नहीं हुए अपितु जीवित रहने की चिंताएँ बढ़ रही हैं (वायु व जल प्रदूषण, माँसाहार के लिए बढ़ते उद्योग के कारण बढ़ते रोग जैसे:- कोरोना, बर्ड-फ्लू, स्वाईन-फ्लू)। इस असंतुलन के दिखने के बाद भी ये अपने भोग कम नहीं करना चाहते और इनके द्वारा आज भी शोषण हो रहा है।
- कुछ तो अपने मत की संकीर्णता से इतने ग्रस्त हैं कि अपने अनुयायियों की संख्या बढ़ाने के लिए जनसंख्या-विस्फोट कर रहे हैं, भिन्न-भिन्न लालच दे, आकर्षण दिखा अपना अनुयायी बना रहे हैं। इन नव-आगंतुकों को अपने परिवार में लाने के बाद नव-आगंतुक पहले से अधिक सुखी हों इसका ध्यान नहीं रखा जाता।
- हम मनुष्यों के पास बुद्धि है जो हमें सही अथवा गलत का आंकलन कर निर्णय लेने में सहायक होती है। हमें सोच-विकार कर ही निर्णय लेना है।
- हमें अंध-विश्वासी नहीं बनाना है।
- नव-आगंतुक के चयन में केवल भावनाएँ ही नहीं अपितु गहन सोच-विचार भी होना चाहिए।